इकाई 4 उपनिषद्

इकाई की रूपरेखा

4.0 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप –

- उपनिषद् शब्द के व्युत्पत्तिगत अर्थ से परिचित होंगे।
- वैदिक साहित्य ही उपनिषदों की पृष्ठभूमि है, इससे परिचित होंगे।
- उपनिषदों के रचनाकाल का ज्ञान प्राप्त कर सकेंगे।
- प्रमुख उपनिषदों पर कृत भाष्य और अनुवाद की जानकारी प्राप्त कर सकेंगे।

- वेदानुसार उपनिषदों के संख्या से आप परिचित होंगे।
- उपनिषदों के महत्त्व को जान सकेंगे।
- उपनिषदों के प्रतिपाद्य विषय का ज्ञान प्राप्त कर सकेंगे।
- वैदिक वाङ्मय में उपनिषदों के स्थान एवं तत्त्व से परिचित होंगे।

4.1 प्रस्तावना

वैदिक साहित्य विश्व के प्राचीनतम साहित्यों की अप्रतिम, अकल्पनीय, अनुपम ज्ञान निधि है। वेद सर्वज्ञान राशि सहित भारतीय धर्म, संस्कार, संस्कृति एवं वैदिक दर्शन के मूल उत्स हैं। सम्पूर्ण वैदिक ज्ञान राशि इतनी दीर्घ है कि इनसे सहस्राधिक ग्रन्थ निःसृत हैं। इस प्रकार वैदिक साहित्य के मूलभूत स्वरूप को जानने हेतु **"मन्त्रब्रह्मणयोर्वेदनामधेयम्"** (आपस्तम्ब यज्ञ परिभाषा) इस लक्षण के अनुसार मन्त्र संहिता और ब्राह्मण ग्रन्थ को वेद कहते हैं, ये दोनों एक ही नाम वेद से जाने जाते हैं। इस ज्ञान निधि को वैदिक वाङ्मय में तीन भागों में विभक्त किया गया है– 1. ब्राह्मण, 2. आरण्यक, 3. उपनिषद्। कुछ स्थान पर इनके चार भाग मिलते हैं– 1. संहिता, 2. ब्राह्मण, 3. आरण्यक और 4. उपनिषद्। इन विभागों में क्रमशः कर्मकाण्ड, उपासनाकाण्ड, ज्ञानकाण्ड हैं। कर्मकाण्ड संहिता और ब्राह्मण में निहित है, उपासनाकाण्ड आरण्यक का विषय है और ज्ञानकाण्ड उपनिषद् में सन्निहित है। प्रस्तुत इकाई में आप उपनिषदों के विषय में विस्तृत अध्ययन करेंगे।

4.2 उपनिषद् का परिचय

उपनिषदों को रहस्य भी कहा जाता है। यह भारतीय वैदिक दर्शन की पृष्ठभूमि है। उपनिषदों की संख्या अनगिनत है। डॉ. सर्वपल्ली राधाकृष्णन् के वैदिक दार्शनिक विचारधारा के अनुसार प्राचीनतम उपनिषदें 10 हैं और बाद की लगभग 98 से 104 तक उत्तरकालीन हैं। इनका मत है कि कुछ उपनिषदों की रचना 14वीं या 15वीं शताब्दी में हुई। सम्प्रति चारों वेदों से सम्बन्धित उपनिषद् प्राप्त हैं।

4.2.1 उपनिषद् शब्दार्थ विचार

उपनिषद् शब्द **उप+नि+सद्+क्विप्** अर्थात् **उप** और **नि** उपसर्गपूर्वक **षद्लृ गतौ** धातु से **क्विप्** प्रत्यय करने पर निष्पन्न होता है। इसका अर्थ है–उप = समीप, नि = निश्चय से या निष्ठापूर्वक, **सद्** = बैठना, अर्थात् **षद्लृ** धातु का अर्थ बैठना भी होता है, अतः तत्त्वज्ञान के लिए गुरु के पास सविनय बैठना। आचार्य शंकर ने कठोपनिषद् के भाष्य प्रस्तावना में उपनिषद् का अर्थ ब्रह्मविद्या का द्योतक माना है। उन्होंने उपनिषद् शब्द की व्याख्या इस प्रकार की है। सद् धातु (षदलृ विशरणगत्यवसादनेषु) के तीन अर्थ हैं–

1. **विशरण** अर्थात् नाश होना, जिसमें संसार की मूलभूत अविद्या का नाश होता है।
2. **गति** अर्थात् प्राप्त करना या जानना, जिससे ब्रह्म की प्राप्ति होती है या उसका ज्ञान होता है।
3. **अवसादन** अर्थात् शिथिल होना, जिससे मनुष्य के दुःख या बन्धन शिथिल होते हैं।

इस प्रकार से आचार्य शंकर ने उपनिषदों के अध्ययन से अविद्या का नाश, ब्रह्म-ज्ञान की प्राप्ति और उसका ज्ञान तथा सांसारिक दुःख-निरोध, इन तीनों अर्थों को लेकर उपनिषद् को ब्रह्मविद्या स्वीकार किया है। ब्रह्मविद्या के प्रतिपादक ग्रन्थों को उपनिषद् कहा जाता है। अमरकोषकार ने उपनिषद् शब्द का अर्थ **"धर्मे रहस्युपनिषत्"** लिखा है, इनके अनुसार उपनिषद् शब्द गूढ धर्म एवं रहस्य के अर्थ में प्रयुक्त होता है।

4.2.2 उपनिषदों का महत्त्व

वैदिक साहित्य में उपनिषदों का स्थान अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है। वैदिक सूक्तों में जिस दार्शनिक विचारधारा का प्रारूप मिलता है उसका विकसित रूप उपनिषदों में दृष्टिगोचर होता है। ये उपनिषद् ग्रन्थ ही भारतीय तत्त्वज्ञान एवं धार्मिक सिद्धान्तों के मूलस्रोत हैं। श्रीमद्भगवद्गीता माहात्म्य में **"सर्वोपनिषदो गावो दोग्धा गोपालनन्दनः"** कहकर व्यास जी ने सिद्ध कर दिया कि उपनिषदों का महत्त्व संस्कृत साहित्य मे कितना रहस्यपूर्ण है। उपनिषदों के महत्त्व का अनुमान इससे भी लगाया जा सकता है कि देश-विदेश की विभिन्न भाषाओं में इनका अनुवाद किया गया है। उपनिषदों में ऋषि मुनियों ने अपने जीवन में प्राप्त ज्ञान और अनुभव का सार डाला है। जीवन के सभी आध्यात्मिक, दार्शनिक विचार और चिन्तन उपनिषदों में हैं। उपनिषदों से प्राप्त ज्ञान सदैव शाश्वत और सनातन है। यह जीवन के लक्ष्य तक पहुंचने का मार्ग है जिससे हम जीवन के लक्ष्य को आसानी से प्राप्त कर सकते हैं। उपनिषद् आत्मा से परमात्मा का सम्बन्ध जोड़ने वाली महत्त्वपूर्ण कड़ी है तथा प्रस्थनत्रयी (ब्रह्मसूत्र,उपनिषद्, गीता) में इनका स्थान है।

4.2.3 उपनिषदों का रचनाकाल

उपनिषद् ब्राह्मण ग्रन्थों के अन्तिम सीमा बिन्दु हैं। हमें उपनिषदों के रचना सन्दर्भ में कुछ पक्षों पर अवश्य मन्थन करना चाहिए। प्रथम पक्ष– वैदिक काल निर्धारणकर्ता भारतीय तथा पाश्चात्य मनीषियों ने जो समय वेदों के रचनाकाल को बताते हुए, ब्राह्मण ग्रन्थों का जो रचनाकाल लिखा है वही हमें प्रामाणिक रूप से उपनिषद् काल मानना चाहिए। जैसा कि स्वामी दयानन्द एवं श्री रघुनन्दन शर्मा सृष्टि के प्रारम्भ से वेदों का आविर्भाव मानते हैं। द्वितीय पक्ष–श्री बालगंगाधर तिलक महोदय कृत्तिका काल 2500-1400 ई.पू. ब्रह्मण ग्रन्थों का रचनाकाल माना है। श्री शंकर बालकृष्ण दीक्षित ने 2500 ई.पू. लिखा है। पाश्चात्य वैदिक अध्येता मैक्समूलर ने 800 ई.पू. से 600 ई.पू. के समय को ब्राह्मण ग्रन्थों का रचना काल माना है। यहाँ बार-बार ब्राह्मण ग्रन्थों का काल देने का अभिप्राय मात्र इतना ही है कि जो काल इनका था वही समय उपनिषदों का था, क्योंकि उपनिषद् ब्राह्मण के अन्तिम भाग हैं। तृतीय पक्ष– प्रो. वैद्य ने मैत्रायणीय उपनिषद् में उद्धृत कुछ ज्योतिषीय बिन्दुओं को लेकर उपनिषद् काल निर्धारण करने को कहा है। श्री बालगंगाधर तिलक महोदय ने मैत्रायणीय उपनिषद् का काल 1900 वि.पू. (लगभग 1950 ई.पू.) माना है। प्रो. रानाडे ने उपनिषद् काल को ठीक-ठीक निश्चित करने में असमर्थता व्यक्त करते हुए इसकी दो सीमाएँ निर्धारित की हैं– पूर्व सीमा 12वीं शती ई.पू. और दूसरी छठीं शताब्दी ई.पू.। डॉ. सर्वपल्ली राधाकृष्णन ने भारतीय दर्शन भाग1 में प्रारम्भिक एवं प्रामाणिक, जिन पर शंकराचार्य ने भाष्य लिखा है उन उपनिषदों का रचना काल 700 ई.पू. से 600 ई.पू. अथवा ईसा से 500 वर्ष पूर्व माना है तथा 108 उपनिषदों में से पहले की 13 छोड़कर शेष को उत्तरकालीन माना है और इनमें भी कुछ उपनिषदों का रचना काल 14वीं या 15वीं शताब्दी हुआ ऐसा लिखा हैं। चतुर्थ पक्ष– उपरोक्त के अतिरिक्त संस्कृत वाङ्मय के ग्रन्थों से भी

उपनिषद् काल निर्धारण किया जा सकता है। उपनिषदों मे अनेक स्थलों पर विदेह जनक, कैकय अश्वपति, पांचाल प्रवाहण, यम नचिकेता और काशीराज अजातशत्रु आदि का वर्णन मिलता है। महर्षि पाणिनि 500 ई.पू. उपनिषद् का रचनाकाल मानते हुए अष्टाध्यायी सूत्रों में (सूत्र संख्या–1.4.79, 4.3.73, 4.3.129) उपनिषदों का उद्धरण दिया है। इन राजाओं तथा ग्रन्थकार पाणिनि के समय को भी चिन्हित कर उपनिषद् काल प्रामाणिक रूप से माना जा सकता है। उपनिषद् रचनाकाल के सन्दर्भ में विस्तृत ज्ञान के लिये गीता प्रेस कल्याण उपनिषद् अंक तथा भारतीय दर्शन का इतिहास एवं वैदिक साहित्य, संस्कृत साहित्य का इतिहास मंथन किया जा सकता है।

4.2.4 उपनिषदों के रचयिता

वैदिक साहित्य में प्रतिबिम्बित तथ्यों के आधार पर उपनिषदों का रचयिता उन्हें मानने में कोई अतिशयोक्ति नहीं होनी चाहिए जिन ऋषियों ने वेद के भिन्न-भिन्न शाखाओं को अनेक शिष्यों मे वितरित किया, जो कालान्तर में उन शिष्यों के नामानुसार वेद के पृथक्-पृथक् शाखा रूप में प्रचलित हुईं। अतः उपनिषद् वाङ्मय के रचनाकर्ता इन शाखाओं से सम्बन्धित ऋषि ही हैं, ऐसा इस कारण भी मानना चाहिए क्योंकि प्रायः उपनिषदों के नाम और अन्दर के प्रतिपाद्य विषय से भी स्पष्ट हो जाता है।

4.2.5 उपनिषद् का प्रतिपाद्य विषय

उपनिषद् तर्क-प्रधान ग्रन्थ है। वैदिक ऋषियों की बौद्धिक शक्ति की पराकाष्ठा उन्हीं के द्वारा प्रकाश में आयी है। उपनिषदों के तर्क का अपना मौलिक आधार है। उपनिषदों में इस प्रकार के तर्क द्वारा वस्तु की यथार्थता का दिग्दर्शन कराने का कारण भी विद्यमान है। सृष्टि की उत्पत्ति, स्थिति और लय को स्पष्ट करने के लिए सहज एवं सरल उपाय या उत्तर नहीं है। आत्मविद्या के प्रसंग में अतिशय महत्त्व स्वीकार किया जाता है, यथा– विद्या, अविद्या, श्रेयस, प्रेयस्, ओउम्, आचार्य-शिष्य, अधिकारी, शान्ति, ब्रह्मविद्या, अग्निविद्या, मन, बुद्धि, योग, संयम, बन्धन, कामना, प्राण आदि हैं। वस्तुतः देखा जाये तो उपनिषद् वेदों की विचार प्रधान संस्कृति के ही व्याख्यान हैं। वेद के चार भाग हैं– संहिता, ब्राह्मण, आरण्यक और उपनिषद्।

1) संहिता में वैदिक देवी देवताओं की स्तुति के मन्त्र हैं।
2) ब्राह्मण में वैदिक कर्मकाण्ड और यज्ञों का वर्णन है।
3) आरण्यक में कर्मकाण्ड और यज्ञों की रूपक कथाएँ और तत्सम्बन्धी दार्शनिक व्याख्याएँ हैं।
4) उपनिषद् में वास्तविक वैदिक दर्शन का सार है।

4.2.6 उपलब्ध उपनिषदों की संख्या

वैदिक वाङ्मय के मतानुसार शंकराचार्य जी ने 10 उपनिषदों को प्रामाणिक माना है तथा उन पर पाण्डित्यपूर्ण भाष्य भी लिखा है। मुक्तिक उपनिषद् ने भी दशोपनिषदं पठ (1.27) के द्वारा प्रामाणिक उपनिषदें 10 मानी हैं तथा इनके ये नाम दिये हैं–

ईश-केन-कठ-प्रश्न-मुण्ड-माण्डूक्य-तित्तिरिः।
ऐतरेयं च छान्दोग्यं बृहदारण्यकं तथा।। (मुक्तिकोपनिषद् 1.30)

अर्थात् ईशावास्योपनिषद्, केनोपनिषद्, कठोपनिषद्, प्रश्नोपनिषद्, मुण्डकोपनिषद्, माण्डूक्योपनिषद्, तैत्तिरीयोपनिषद्, ऐतरेयोपनिषद्, छान्दोग्योपनिषद् एवं बृहदारण्यकोपनिषद् हैं। इसके अतिरिक्त कौषीतकि उपनिषद्, श्वेताश्वतरोपनिषद् तथा मैत्रायणीयोपनिषद् भी प्राचीन माने जाते हैं क्योंकि आचार्य शंकर ने अपने भाष्य में कौषीतकि उपनिषद् श्वेताश्वतरोपनिषद् के उद्धरण दिए हैं। अतः इन दो को लेकर प्राचीन उपनिषदों की संख्या 12 और तृतीय मैत्रायणीयोपनिषद् को लेकर 13 मानी जाती है। वैदिक साहित्यानुसार उपनिषदों की संख्या के विषय में मतभेद है। उपनिषदों की संख्या 108 से 223 तक मानी जाती है। मुक्तिकोपनिषद् 108, उपनिषद्वाक्यमहाकोश 223, अड्यार लाईब्रेरी (मद्रास) से लगभग 200 उपनिषदों का एक संग्रह प्रकाशित हुआ है। डॉ. सर्वपल्ली राधाकृष्णन् ने भारतीय दर्शन के इतिहास ग्रन्थ में सन् 1917 में निर्णय सागर प्रेस से प्रकाशित उपनिषदों के अनुसार इनकी संख्या 112 मानी है परन्तु स्पष्टतया 108 उपनिषदों का उल्लेख शुक्ल यजुर्वेदीय मुक्तिकोपनिषद् के प्रथम अध्याय में प्राप्त होता हैं। इस उपनिषद् में दो अध्याय हैं, जिनमें प्रथम अध्याय के 56 मन्त्रों में ऋग्वेद से 10, शुक्ल यजुर्वेद से 19, कृष्ण यजुर्वेद से 32, सामवेद से 16, अथर्ववेद से 31 उपनिषदों के नाम का उल्लेख किया गया है। मुक्तिकोपनिषदानुसार समग्र 108 उपनिषदें निम्नवत् हैं –

ईशकेनकठप्रश्नमुण्डमाण्डूक्यतित्तिरिः।
ऐतरेयं च छान्दोग्यं बृहदारण्यकं तथा।।

ब्रह्मकैवल्यजाबालष्वेताष्वो हंस आरुणिः।
गर्भो नारायणो हंसो बिन्दुर्नादशिरः शिखा।।

मैत्रायणी कौषीतकी बृहज्जाबालतापनी।
कालाग्निरुद्रमैत्रेयी सुबालक्षुरिमन्त्रिका।।

सर्वसारं निरालम्बं रहस्यं वज्रसूचिकम्।
तेजोनादध्यानविद्यायोगतत्त्वात्मबोधकम्।।

परिव्राट् त्रिशिखी सीता चूडा निर्वाणमण्डलम्।
दक्षिणा शरभं स्कन्दं महानारायणाह्वयम्।।

रहस्यं रामतपनं वासुदेवं च मुद्गलम्।
शाण्डिल्यं पैङ्गलं भिक्षुमहच्छारीरकं शिखा।।

तुरीयातीतसंन्यासपरिव्राजाक्षमालिका।
अव्यक्तैकाक्षरं पूर्णा सूर्याक्ष्यध्यात्मकुण्डिका।।

सावित्र्यात्मा पाशुपतं परं ब्रह्मावधूतकम्।
त्रिपुरातपनं देवीत्रिपुरा कठभावना।।

हृदयं कुण्डली भस्म रुद्राक्षगणदर्शनम्।
तारसारमहावाक्य पञ्चब्रह्माग्निहोत्रकम् ।।

गोपालतपनं कृष्णं याज्ञवल्क्यं वराहकम्।
शाट्यायनी हयग्रीवं दत्तात्रेयं च गारुडम्।।
कलिजाबालिसौभाग्यरहस्यऋचमुक्तिका ।। 1.30–39।।

अर्थात् – 1.ईश, 2.केन, 3.कठ, 4.प्रश्न, 5.मुण्डक, 6.माण्डूक्य, 7.तैत्तिरीय, 8.ऐतरेय, 9. छान्दोग्य, 10.बृहदारण्यक, 11.बह्म, 12.कैवल्य, 13.जाबाल, 14.श्वेताश्वतर, 15.हंस, 16.

आरुणिक, 17.गर्भ, 18.नारायण, 19.परमहंस, 20.अमृतबिन्दु, 21.अमृतनाद, 22. अथर्वशिरस, 23.अथर्वशिखा, 24.मैत्रायणी, 25.कौषीतकिब्राह्मण, 26.बृहज्जाबाल, 27. नृसिंहतापनीय, 28. कालाग्निरुद्र, 29.मैत्रेयी, 30.सुबाल, 31.क्षुरिका, 32.यन्त्रिका, 33. सर्वसारे, 34.निरालम्ब, 35.शुकरहस्य, 36.वज्रसूचिका, 37.तेजोबिन्दु, 38.नादबिन्दु, 39. ध्यानबिन्दु, 40.ब्रह्मविद्या, 41.योगतत्व, 42.आत्मप्रबोध, 43.नारदपरिव्राजक, 44. त्रिशिखिब्राह्मण, 45.सीता, 46.योगचूडामणि, 47.निर्वाण, 48.मण्डलब्राह्मण, 49.दक्षिणामूर्ति, 50.शरभ, 51.स्कन्द, 52.त्रिपादविभूति महानारायण, 53.अद्वयतारक, 54.रामरहस्य, 55. रामतापनीय, 56.वासुदेव, 57.मुद्‌गल, 58.शाण्डिल्य, 59.पिङ्गल, 60.भिक्षक, 61.महा, 62. शारीरक, 63.योगशिखा, 64.तुरीयातीत, 65.संन्यास, 66.परमहंसपरिव्राजक, 67.अक्षमाला, 68.अव्यक्त, 69.एकाक्षर, 70.अन्नपूर्णा, 71.सूर्य, 72.अक्षि, 73.अध्यात्म, 74.कुर्डिक, 75. सावित्री, 76.आत्मा, 77.पाशुपत, 78.परब्रह्म, 79.अवधूत, 80.त्रिपुरातापनीय, 81.देवी, 82. त्रिपुरा, 83.कठरुद्र, 84.भावना, 85.रुद्रहृदय, 86.योगकुण्डली 87.महावाक्य, 88.पञ्चब्रह्म, 89.प्राणाग्निहोत्र, 90.गोपालतापनीय, 91.कृष्ण, 92.याज्ञवल्क्य, 93.वराह, 94.शाट्यायनीय, 95.हयग्रीव, 96.दत्तात्रेय, 97.गरुड, 98.कलिसंतरण, 99.जाबालि, 100.सौभाग्यलक्ष्मी, 101. भस्म जाबाल, 102.रुद्राक्ष जाबाल, 103.गणपति, 104.जाबालदर्शन, 105.तारसार, 106. सरस्वतीरहस्य, 107.बह्वृच, 108. मुक्तिकोपनिषद् हैं।

डॉ. राधाकृष्णन् ने इसके साथ इन चार को भी लिखा है। निर्णय सागर प्रेस के अनुसार – 1. नारायणोत्तर, 2. नृसिंहोत्तर तापिनी, 3. रामोत्तर तापिनी, 4. गोपलोत्तर तापिनी। इनको लेकर 112 उपनिषदें हैं।

4.2.7 प्रमुख उपनिषदें और इनका भाष्य तथा अनुवाद

आचार्य शंकर ने ईश, केन, कठ, प्रश्न, मुण्डक, माण्डूक्य, तैत्तिरीय, ऐतरेय, छान्दोग्य एवं बृहदारण्यक सहित 10 प्रमुख उपनिषदों पर भाष्य लिखा है जिन्हें शांकरभाष्य के नाम से जाना जाता है तथा भाष्यों में श्वेताश्वतरोपनिषद्, मैत्रायणीयोपनिषद् और कौषितकीयोपनिषद् का उल्लेख करने के कारण प्रमुख उपनिषदें 13 हैं। उपरोक्त 13 उपनिषदों को मुख्य मानकर पाश्चात्य विद्वान ह्यूम ने सन्1821 में अंग्रेजी अनुवाद किया है। शाहजहाँ के पुत्र एवं औरंगजेब के बड़े भाई दाराशिकोह ने भी लगभग 50 उपनिषदों का सन् 1656-57 में फारसी भाषा में अनुवाद किया है। इस फारसी अनुवाद को फ्रेंच यात्री बर्नियर अपने साथ फ्रांस ले गया, जिसे एन्क्वेटिल ड्यूरेन ने 1775 ई. में प्राप्त कर लिया और उसने उसके दो अनुवाद किये– एक फ्रेंच भाषा में और दूसरा लैटिन भाषा में। फ्रेंच अनुवाद तो प्रकाशित न हो सका, किन्तु लैटिन अनुवाद सन् 1801-1802 में 'औपनिखत' नाम से प्रकाशित हुआ। फारसी अनुवाद के आधार पर सन् 1720 में इसका हिन्दी अनुवाद हुआ, जिसका नाम 'उपनिषद् भाष्य' रखा गया। मैक्समूलर ने सन् 1879-1884 के मध्य सेक्रेड बुक्स आफ द ईस्ट ग्रन्थमाला में 12 उपनिषदों का अंग्रेजी अनुवाद प्रकाशित किया। इसके पश्चात् जर्मन विद्वानों ने सन् 1882 से 1889 तक एफ.मिशल तथा बोथलिक तथा सन् 1897 में पाल ड्यूसन ने जर्मन भाषा मे अनुवाद प्रकाशित किया। इसके अतिरिक्त भारतीय विद्वानों में सन् 1832 में राजा राममोहन राय ने कुछ उपनिषदों का अंग्रेजी अनुवाद प्रकाशित किया तथा सीताराम शास्त्री और गंगानाथ झा ने सन् 1898-1901 के मध्य आठ उपनिषदों का अंग्रेजी अनुवाद किया। इसके अतिरिक्त और भी विद्वानों ने यूरोपीय भाषाओं में उपनिषदों का अनुवाद किया है जिसके द्वारा इसका प्रचार-प्रसार हो गया।

4.3 ऋग्वेद के उपनिषद्

वैदिक साहित्यानुसार ऋग्वेद से सम्बन्धित 10 उपनिषदें हैं–

ऐतरेयकौषीतकीनादबिन्द्वात्मप्रबोधनिर्वाण–
मुद्गलाक्षमालिकात्रिपुरासौभाग्यबह्वृचा
नामृग्वेदगतानां दशसंख्याकानामुपनिषदाम् ।।मुक्तिकोपनिषद् 50।।

1.ऐतरेय, 2.कौषीतकी, 3.नाद-बिन्दु, 4.आत्मबोध, 5.निर्वाण, 6.मुद्गल, 7.अक्षमालिक, 8. त्रिपुर, 9.सौभाग्य, 10.बह्वृच। यहाँ प्रमुख उपनिषदों के वर्ण्य-विषय पर प्रकाश डाला जायेगा।

4.3.1 ऐतरेय उपनिषद्

यह ऐतरेयारण्यक का एक अंश है। ऐतरेयारण्यक के द्वितीय अध्याय के चतुर्थ, पञ्चम और षष्ठ खण्ड ही "ऐतरेयोपनिषद्" है। इस प्रकार इसमें कुल तीन अध्याय हैं।

1. प्रथम अध्याय में बताया गया है कि परमात्मा के ईक्षण शक्ति से सृष्टि हुई है। शरीर में सभी देवों का निवास है। शरीर में व्याप्त ब्रह्म के दर्शन से ही जीवात्मा का नाम "इन्द्र" पड़ा।
2. द्वितीय अध्याय में पुनर्जन्म के सिद्धान्त का प्रतिपादन है और कर्मानुसार विभिन्न योनियों में जन्म का वर्णन है।
3. तृतीय अध्याय में प्रज्ञान-ब्रह्म का वर्णन है। मनोविज्ञान की दृष्टि से यह महत्त्वपूर्ण अध्याय है। मन ही ब्रह्म, इन्द्र और प्रजापति है। मन के ही विभिन्न नाम हैं, विज्ञान, प्रज्ञा, धृति, मति, मनीषा, स्मृति, संकल्प, काम, प्राण आदि। चतुर्विध सृष्टि 1.अण्डज – पक्षी आदि, 2.जरायुज – मनुष्यादि, 3.स्वेदज – जूँ आदि, 4. उद्भिज् –वृक्षादि वर्णित है।

4.3.2 कौषीतकि उपनिषद्

यह कौषीतकि ब्राह्मण से सम्बद्ध है। कौषीतकि ब्राह्मण से सम्बद्ध कौषीतकि आरण्यक है इसका अपर नाम शांखायन आरण्यक है। इसी आरण्यक के 3 से 6 अध्याय तक को कौषीतकि उपनिषद् कहते हैं। इसमें कुल 4 अध्याय हैं, इसको कौषीतकि ब्राह्मणोपनिषद् कहते हैं।

1. प्रथम अध्याय में मृत्यु के बाद जीवात्मा के प्रयाण के देवयान और पितृयान नामक मार्गों का वर्णन आदि प्रासंगिक विषय है।
2. द्वितीय अध्याय में आत्मा के प्रतीक प्राण के स्वरूप का विवेचन है। प्राण ही ब्रह्म है और मन प्राणरूपी ब्रह्म का दूत है, नेत्र रक्षक हैं, श्रोत्र द्वारपाल हैं और वाणी दासी है। जो इनके स्वरूप को जानता है, वही इन्द्रियों पर अधिकार रख सकता है आदि विषय प्रतिपादित है।
3. तृतीय अध्याय में इन्द्र प्रतर्दन को प्राण और प्रज्ञा का उपदेश देते हैं। इसी प्रसङ्ग में प्राणतत्त्व का विशद् विवेचन किया गया है।

4. चतुर्थ अध्याय में काशिराज अजातशत्रु बलाका को पर ब्रह्म (ब्रह्मविद्या) का उपदेश देते हैं। गार्ग्य गर्गगोत्र में उत्पन्न गार्ग्य नाम से प्रसिद्ध एक ब्राह्मण थे, जो बलाका के पुत्र थे।

4.4 यजुर्वेद के उपनिषद्

वैदिक साहित्यानुसार शुक्लत्व-कृष्णत्व भेद से यजुर्वेद दो भागों में विभक्त है। अतः विभक्तानुसार इस वेद से सम्बन्धित प्राप्य उपनिषद् निम्नवत् हैं।

शुक्ल यजुर्वेद से सम्बन्धित 19 उपनिषदें हैं–

ईशावास्यबृहदारण्यजाबालहंसपरमहंससुबाल–
मन्त्रिकानिरालम्बत्रिशिखीब्राह्मणमण्डलब्राह्मणाद्वयतारक–
पैङ्गलभिक्षुतुरीयातीताध्यात्मतारसारयाज्ञवल्क्य–
शाट्यायनीमुक्तिकानां शुक्लयजुर्वेदगतानामेकोनविंशतिः ।।मुक्तिकोपनिषद् 51।।

1.ईश, 2.बृहदारण्यक, 3.जाबाल, 4.हंस, 5.परमहंस, 6.सुबाल, 7.मान्त्रिक, 8.निरालम्ब, 9. त्रिशिख, 10.मण्डलब्राह्मण, 11.अद्वयतारक, 12.पैंगल, 13.भिक्षुक, 14.तुरीयातीत, 15. अध्यात्म, 16.तारसार, 17.याज्ञवल्क्य, 18.शाट्यायनी, 19.मुक्तिक।

कृष्ण यजुर्वेद से सम्बन्धित 32 उपनिषदें हैं–

कठवल्लीतैत्तिरीयकब्रह्मकैवल्यश्वेताश्वतरगर्भ–
नारायणामृतबिन्द्वमृतनादकालाग्निरुद्रक्षुरिका–
सर्वसारशुकरहस्यतेजोबिन्दुध्यानबिन्दुब्रह्मविद्या–
योगतत्त्वदक्षिणामूर्तिस्कन्दशारीरकयोगशिखैकाक्षर–
अक्ष्यवधूतकठरुद्रहृदययोगकुण्डलिनीपञ्चब्रह्म–
प्राणाग्निहोत्रवराहकलिसन्तरणसरस्वतीरहस्यानां
कृष्णयजुर्वेदगतानां द्वात्रिंशत्संख्याकानमुपनिषदाम् ।। मुक्तिकोपनिषद् 52।।

1.कठ, 2.तैत्तिरीय, 3.ब्रह्म, 4.कैवल्य, 5.श्वेताश्वतर, 6.गर्भ, 7.नारायण, 8.अमृत-बिन्दु, 9.अमृत-नाद, 10.कालाग्निरुद्र, 11.क्षुरिक, 12.सर्व-सार, 13.शुक-रहस्य, 14.तेजो-बिन्दु, 15. ध्यानिबन्दु, 16. ब्रह्मविद्या, 17. योगतत्त्व, 18. दक्षिणामूर्ति, 19. स्कन्द, 20. शारीरक, 21. योगिशखा, 22. एकाक्षर, 23. अक्षि, 24. अवधूत, 25. कठरुद्र, 26. रुद्र-हृदय, 27. योग-कुण्डिलिन, 28. पंच-ब्रह्म, 29. प्राणाग्नि-होत्र, 30. वराह, 31. किल-सन्तरण, 32. सरस्वती-रहस्य।

यहाँ प्रमुख उपनिषदों के वर्ण्य-विषय पर प्रकाश डाला जायेगा।

4.4.1 शुक्ल यजुर्वेद के उपनिषद्

क) ईश उपनिषद् (ईशावास्योपनिषद्)

शुक्ल यजुर्वेद माध्यन्दिन शाखा का अन्तिम चालीसवाँ अध्याय ही "ईशोपनिषद्" है। इसमें कुल 18 मन्त्र हैं। इसका प्रथम मन्त्र "ईशावास्यमिदं" से प्रारम्भ होता है, अतः इसका नाम ईशोपनिषद् पड़ गया, इसको ईशावास्योपनिषद् भी कहते हैं। निष्काम कर्म, परमार्थ ज्ञान की प्रधानता, कर्म और ज्ञान का समन्वय और ईश्वर की सर्वव्यापकता इसका प्रतिपाद्य विषय है। यह लघुकाय किन्तु महत्त्वपूर्ण

उपनिषद् है। यह ज्ञान, कर्म और उपासना का अनुपम उदाहरण प्रस्तुत करता है। अतः इसे महत्त्वपूर्ण दार्शनिक ग्रन्थ माना गया है। ईशावास्योपनिषद् को सम्पूर्ण गीता का मूल माना जाता है।

ख) बृहदारण्यकोपनिषद्

शुक्ल यजुर्वेद माध्यन्दिन एवं काण्व शाखा से सम्बद्ध शतपथ ब्राह्मण के 14वें काण्ड के अन्तिम छः अध्यायों को ही बृहदारण्यकोपनिषद् कहा जाता है। इसमें आरण्यक और उपनिषद् का सम्मिश्रण होने से यह नाम पड़ा है। इसे ब्राह्मण, आरण्यक और उपनिषद् तीनों कह सकते हैं। इसमें कुल छः अध्याय हैं। यह आकार में सबसे विशाल उपनिषद् है। यह अध्यात्म-शिक्षा से ओत-प्रोत है।

प्रथम अध्याय में यज्ञीय-अश्व के रूप में परम पुरुष का वर्णन, मृत्यु का विकराल रूप और प्राण की श्रेष्ठता का वर्णन है।

द्वितीय अध्याय में गार्ग्य और काशीराज अजातशत्रु का संवाद, याज्ञवल्क्य और उनकी पत्नी कात्यायनी एवं मैत्रेयी का संवाद, ब्रह्म के दो रूप मूर्त अमूर्त आदि का वर्णन है।

तृतीय अध्याय का प्रतिपाद्य विषय है, जनक के सभा में गार्गी और याज्ञवल्क्य का संवाद साथ में याज्ञवल्क्या द्वारा प्रतिपक्षियों को पराजित करना।

चतुर्थ अध्याय में याज्ञवल्क्य द्वारा राजा जनक को ब्रह्मविद्या का उपदेश है, इसमें पुनः याज्ञवल्क्य का सम्पत्ति-विभाजन का वर्णन, मैत्रेयी को ब्रह्मविद्या का उपदेश आदि है।

पञ्चम अध्याय में प्रजापति द्वारा देव, मनुष्य और असुरों को द द द का उपदेश। ब्रह्म के विभिन्न रूपों का वर्णन, प्राण ही वेदरूप है और गायत्री के विभिन्न रूपों का वर्णन है।

षष्ठ अध्याय में प्राण की श्रेष्ठता, ऋषि प्रवहण जैबलि और श्वेतकेतु का दार्शनिक संवाद, पञ्चाग्नि-मीमांसा एवं ऋषियों की वंश-परम्परा का विस्तृत वर्णन आदि है।

4.4.2 कृष्ण यजुर्वेद के उपनिषद्

क) कठोपनिषद्

कृष्ण यजुर्वेद के "कठशाखा" से सम्बन्धित होने के कारण इसका नाम "कठोपनिषद्" है। इसमें दो अध्याय हैं। प्रत्येक अध्याय में 3 खण्ड (वल्ली) हैं। इस उपनिषद् में यम और नचिकेता के संवादों का वर्णन है।

ख) तैत्तिरीय उपनिषद्

तैत्तिरीय आरण्यक के अन्तिम तीन प्रपाठकों (7,8 और 9) को ही तैत्तिरीय उपनिषद् कहा जाता है। प्रपाठकों के नामों में परिवर्तन कर दिया गया है। संहितोपनिषद् (प्र.7) को 'शिक्षावल्ली', वारुणी उपनिषद् (प्र.8 और 9) को क्रमशः 'ब्रह्मानन्द वल्ली' और 'भृगु वल्ली' नाम दिया गया है। इसमें तीन प्रपाठकों के स्थान पर तीन वल्ली (अध्याय) हैं। इसमें अध्यायों को "वल्ली" कहा गया है। इसका प्रथम अध्याय शिक्षावल्ली, द्वितीय अध्याय ब्रह्मानन्दवल्ली और तृतीय अध्याय भृगुवल्ली है।

प्रथम अध्याय "शिक्षावल्ली" में वर्ण, स्वर, मात्रा, बल, साम और सन्तान का विवेचन है। **(वर्णः, स्वरः, मात्रा, बलम्, साम, सन्तानः इत्युक्तः शिक्षाध्यायः। 1.2.1)** इसमें वैदिक मन्त्रों के उच्चारण के प्रकार भी दिए गए हैं। आचार्य अपने शिष्य को कैसे अनुशासित करता है यह भी बताया गया है।

द्वितीय अध्याय ब्रह्मानन्दवल्ली में ब्रह्मा के स्वरूप को बताया गया है। ब्रह्मा को आनन्द कहा गया है। समस्त सृष्टि ब्रह्मा से उत्पन्न हुई है। ब्रह्म की प्राप्ति से परमानन्द की प्राप्ति होती है। इसमें पाँच कोशों (अन्न, प्राण, मन, विज्ञान तथा आनन्द) का भी वर्णन किया गया है।

तृतीय अध्याय "भृगुवल्ली" में भृगु और वरुण का संवाद है। यहाँ भी ब्रह्म के स्वरूप को बताया गया है तथा पंचकोशों के विराट् रूप का भी वर्णन है।

ग) मैत्रायणी उपनिषद्

यह उपनिषद् कृष्ण यजुर्वेद की मैत्रायणी संहिता से सम्बन्धित है। प्राचीनतम उपनिषदों की भाँति यह गद्यबद्ध है। इसमें कुल सात अध्याय हैं, जिनमें षष्ठ अध्याय के अन्तिम आठ प्रपाठक और सप्तम अध्याय परिशिष्ट रूप है। इसमें योग के अष्टाङ्गों का विवेचन तथा हठयोग के मन्त्र सिद्धान्तों का विवरण प्राप्त होता है। इसका मुख्य विषय आत्मरूप का विवेचन है। इसमें वेद-विरोधी सम्प्रदायों का भी उल्लेख मिलता है। इस उपनिषद् का विषय विवेचन तीन प्रश्नों के उत्तर के रूप में प्रस्तुत किया गया है।

प्रथम प्रश्न है कि आत्मा भौतिक शरीर में किस प्रकार प्रवेश पाता है? इसका उत्तर दिया गया है कि स्वयं प्रजापति ही स्वरचित शरीर में चेतनता प्रदान करने के उद्देश्य से पंचप्राणवायु के रूप में प्रविष्ट होता है।

द्वितीय प्रश्न है कि यह परमात्मा किस प्रकार भूतात्मा बनता है? इस प्रश्न का उत्तर सांख्य सिद्धान्तों पर आधारित है। आत्मा प्रकृति के गुणों से पराभूत होकर अपने को भूल जाता है। तदनन्तर आत्मज्ञान एवं मोक्ष के लिए प्रयास करता है।

तृतीय प्रश्न है कि इस दुःखात्मक स्थिति से मुक्ति किस प्रकार मिल सकती है? इस प्रश्न का समाधान स्वतन्त्र रूप से दिया गया है– 'ब्राह्मण धर्म का पालन करने वाले वर्णधर्म के अनुयायी व्यक्ति ही ज्ञान, तप और निदिध्यासन से ब्रह्मज्ञान और मोक्ष प्राप्त कर सकते हैं। ब्राह्मण युग के प्रधान देवता अग्नि, वायु और सूर्य, तीन भावरूप सत्ताएँ काल, प्राण और अन्न तथा तीन लोकप्रिय देवता ब्रह्मा, विष्णु, महेश ये सभी ब्रह्म के रूप बताये गये हैं। इस उपनिषद् का अन्तिम भाग परिशिष्ट रूप है, जिसमें विश्व की सृष्टि का उपाख्यान वर्णित है। इसमें प्रकृति के सत्व, रजस् और तमस् इन तीन गुणों का ब्रह्मा, विष्णु और रुद्र से सम्बन्ध बताया गया है। इसमें ऋग्वैदिक एवं सांख्य के सिद्धान्तों का समन्वय है।

घ) श्वेताश्वतरोपनिषद्

कृष्ण यजुर्वेद से सम्बद्ध श्वेताश्वतर संहिता का एक अंश है। यह कठोपनिषद् के बाद की रचना है, क्योंकि उससे बहुत सा अंश इसमें लिया गया है, यहाँ तक कि कुछ वाक्य ज्यों के त्यों प्रस्तुत हैं। इसमें कुल छः अध्याय हैं।

प्रथम अध्याय में हंस, त्रैतवाद, माया, क्षर-अक्षर, सत्य और तप से आत्मदर्शन है।

द्वितीय अध्याय में योग, योग-विधि, ब्रह्मतत्त्व का विस्तृत विवेचन है।

तृतीय अध्याय में रुद्र विश्वरूप, जीव का स्वरूप, आत्मा का स्वरूप वर्णित है।

चतुर्थ अध्याय में एकेश्वरवाद, त्रैतवाद, प्रकृति, माया-मायी शिव ब्रह्मस्वरूप का वर्णन है।

पंचम अध्याय में क्षर-अक्षर, कपिल ऋषि, जीवात्मा के स्वरूप का वर्णन है।

षष्ठ अध्याय में ब्रह्म के अनेक नाम, हंस, ईश्वर प्रकृति एवं जीव का नियन्ता एवं गुरु भक्ति प्रतिपादित है।

इसमें भक्ति तत्त्व का विवेचन, सांख्य दर्शन के मौलिक सिद्धान्तों का प्रतिपादन है। सत्व, रजस् और तमस् इन तीनों गुणों की साम्यावस्था ही प्रकृति है। यह प्रकृति ही ब्रह्म की माया का दूसरा रूप है। इसमें प्रकृति को माया और महेश्वर को मायी कहा गया है। क्या वह माया वेदान्त की माया से भिन्न है, वेदान्त के अनुसार जगत् मिथ्या है, किन्तु इस उपनिषद् में जगत् के मिथ्यात्व की कल्पना नहीं है। कल्पान्त में ब्रह्म के द्वारा ही जगत् की सृष्टि और उसका प्रलय होता है। इस उपनिषद् में शिव को परमेश्वर कहा गया है। यह शिव ही समस्त प्राणियों में व्याप्त है और उसके सम्बन्ध में ज्ञान होने पर समस्त बन्धनों से मुक्ति मिल जाती है।

4.5 सामवेद के उपनिषद्

वैदिक वाङ्मयानुसार मुक्तिकोपनिषद् प्रतिपादित सामवेद से सम्बन्धित 16 उपनिषदें निम्नवत् हैं–

केनछान्दोग्यारुणिमैत्रायणिमैत्रेयीवज्रसूचिकायोगचूडामणि–
वासुदेवमहत्संन्यासाव्यक्तकुण्डिकासावित्रीरुद्राक्षजाबालदर्शन–
जाबालीनां सामवेदगतानां षोडशसंख्याकाना–
मुपनिषदानामाप्यायन्त्विति शान्तिः ।। मुक्तिकोपनिषद् 53।।

1.केन, 2.छान्दोग्य, 3.आरुणेय, 4.मैत्रायणि, 5.मैत्रेय, 6.वज्र-सूचि, 7.योगचूडामिण, 8. वासुदेव, 9.महत्, 10.संन्यास, 11.अव्यक्त, 12.कुण्डिक, 13.सावित्री, 14.रुद्राक्ष, 15. जाबालदर्शन, 16. जाबाल।

यहाँ प्रमुख उपनिषदों के वर्ण्य-विषय पर प्रकाश डाला जायेगा।

4.5.1 केन उपनिषद्

इस उपनिषद् को तवलकार उपनिषद् और जैमिनीय उपनिषद् भी कहते हैं। इसमें चार खण्ड हैं। प्रथम दो खण्ड पद्यात्मक और शेष दो गद्यात्मक हैं।

प्रथम खण्ड में ब्रह्म के रहस्यमय रूप को बताते हुए पंच ज्ञानेन्द्रिय ब्रह्म से परे हैं किन्तु पंच कर्मेन्द्रिय इसी की सत्ता से कार्य करती हैं, जिसे निर्गुण ब्रह्म कहा जाता है, की चर्चा की गई है।

द्वितीय खण्ड में ब्रह्म अवर्णनीय और अनिर्वचनीय, ब्रह्मज्ञान से जीवन सार्थकता तथा अज्ञान से निरर्थकता आदि की चर्चा है।

तृतीय एवं चतुर्थ खण्डों में उमा हैमवती के सुमधुर आख्यान सहित अन्य विषयों की भी चर्चा है।

4.5.2 छान्दोग्य उपनिषद्

सामवेद की तवलकार शाखा का छान्दोग्य ब्राह्मण है जिसमें दस अध्याय हैं। प्रारम्भ के दो अध्यायों को छोड़कर शेष आठ अध्यायों को 'छान्दोग्योपनिषद्' कहा जाता है। इस उपनिषद् में आठ अध्याय हैं और प्रत्येक अध्याय में अनेक खण्ड हैं। प्रथम अध्याय में तेरह खण्ड, द्वितीय में चौबीस, तृतीय में उन्नीस, चतुर्थ में सत्रह, पंचम में चौबीस, षष्ठ में सोलह, सप्तम में छब्बीस और अष्टम अध्याय में पन्द्रह खण्ड हैं। इसमें गूढ दार्शनिक तत्त्वों का निरूपण आख्यायिकाओं के रूप में किया गया है।

प्रथम अध्याय में ओउम् (ॐ), उद्गीथ एवं साम के गूढ रहस्यों का मार्मिक विवेचन है।

द्वितीय अध्याय में ओउम् की उत्पत्ति, पंचविध सामोपासना, सप्तविध साम, त्रयी विद्या, धार्मिक जीवन की तीन अवस्थाएँ तथा ब्रह्मचर्य, गार्हस्थ्य एवं यतिधर्म का विवेचन है। इस अध्याय के अन्त में शैव उद्गीथ का विवेचन है।

तृतीय अध्याय में वैश्वानर ब्रह्म का प्रतिपादन है, जिसका व्यक्त रूप सूर्य है। सूर्य की देवमधु रूप में उपासना, गायत्री का वर्णन, अङ्गिरस द्वारा देवकीनन्दन कृष्ण को अध्यात्म-शिक्षा और अन्त में अण्ड से सूर्य की उत्पत्ति का वर्णन है।

चतुर्थ अध्याय में सत्यकाम जाबाल की कथा, व रैक्व का दार्शनिक तथ्य, उपकौशल को जाबाल द्वारा ब्रह्मज्ञान का उपदेश आदि का विस्तृत विवेचन है।

पंचम अध्याय में बृहदारण्यक के षष्ठ अध्याय की दोनों कथाओं का एक प्रकार से आवर्तन है। इसमें श्वेतकेतु और प्रवहण जैबलि का दार्शनिक संवाद तथा कैकय अश्वपति के सृष्टि विषयक तथ्यों का विशद् वर्णन किया गया है, जिनमें छः दार्शनिक विद्वानों के आत्म विषय चिन्तनों का विवरण है।

षष्ठ अध्याय में श्वेतकेतु का आख्यान वर्णित है, जिसमें उद्दालक आरुणि ने अपने पुत्र श्वेतकेतु को ब्रह्मविद्या का उपदेश दिया है। श्वेतकेतु ने वेदों का अध्ययन तो कर लिया, किन्तु ब्रह्मज्ञान नहीं सीखा था, तब उसके पिता आरुणि ने उस ब्रह्म से ही चराचर जगत् की उत्पत्ति का वृत्तान्त सुनाते हुए अन्न, जल और तेज से मन, प्राण और वाणी की उत्पत्ति बतायी है। तदनन्तर आरुणि ने श्वेतकेतु से वटवृक्ष का फल तोड़ने को कहा। फल तोड़ने पर उसमें से नन्हें-नन्हें बीज निकले, तब पिता ने उस बीज को भी फोड़ने को कहा। बीज के फोड़े जाने पर आरुणि ने कहा पुत्र तुमने इसमें क्या देखा है? पुत्र ने कहा कि मुझे कुछ भी नहीं दिखायी दे रहा है। तब पिता ने पुत्र को समझाया कि पुत्र जिस बीज के भीतर तुम्हें कुछ भी नहीं दिखायी देता है, उसी में वह महान् वटवृक्ष है। इसी प्रकार ब्रह्म में ही सारा चराचर जगत् निहित है। **'तत्त्वमसि'** यह महावाक्य उपनिषदों के चार महावाक्यों में एक है। इस महावाक्य की व्याख्या करते हुए आरुणि श्वेतकेतु से कहते हैं कि वह अणु जो शरीर में आत्मा है, सत् है, सर्वात्मा है, वही आत्मा है, वही वह सत् है। श्वेतकेतु पुनः प्रश्न करता है कि वह आत्मा द्रष्टव्य क्यों नहीं है? इसका उत्तर देते हुए आरुणि कहते हैं कि जिस प्रकार जल में नमक डाल दिया जाये तो वह उसमें ऐसा घुल जाता है कि वह दिखायी नहीं देता, इसी प्रकार आत्मा सब में व्याप्त है, किन्तु वह इस प्रकार उनमें घुल-मिल गयी है कि वह अलग से दिखायी नहीं देती है।

सप्तम अध्याय में नारद और सनत्कुमार का वृत्तान्त है। नारद ब्रह्मविद्या की शिक्षा के लिए सनत्कुमार के पास जाते हैं। सनत्कुमार ने नाम, वाक्, मन, संकल्पन, चित्त, ध्यान, विज्ञान, बल, अन्न, जल, तेज, आकाश, स्मरण, आशा, प्राण में से प्रत्येक को उत्तरोत्तर बढकर बताया और कहा कि सब कुछ प्राण में ही समाहित है और प्राण के न रहने पर मनुष्य का ऐहलौकिक जीवन नहीं रह जाता। अन्त में ब्रह्म के अन्तिम रूप भूमन् (असीम) का महत्त्व बताते हुए कहते हैं कि भूमा ही सब कुछ है, **"यो वै भूमा तत् सुखम्"** वही शरीर में स्थित आत्मा है।

अष्टम अध्याय में शरीर और विश्व में स्थित आत्मा की तीन अवस्थाओं जाग्रत्, स्वप्न और सुषुप्ति का भी निर्देश है। तृतीय अवस्था में ही आत्मा के सच्चे स्वरूप का ज्ञान होता है। इस अध्याय के अन्त में इन्द्र और असुरराज विरोचन की कथा वर्णित है। इस आख्यान में आत्म प्राप्ति के व्यावहारिक उपायों का संकेत किया गया है।

4.6 अथर्ववेद के उपनिषद्

अथर्ववेद से सम्बन्धित 31 उपनिषदें हैं।

प्रश्नमुण्डकमाण्डूक्याथर्वशिरोऽथर्वशिखाबृहज्जाबाल–
नृसिंहतापनीनारदपरिव्राजकसीताशरभमहानारायण–
रामरहस्यरामतापनीशाण्डिल्यपरमहंसपरिव्राजक–
अन्नपूर्णासूर्यात्मपाशुपतपरब्रह्मत्रिपुरातपनदेवीभावना–
ब्रह्मजाबालगणपतिमहावाक्यगोपालतपनकृष्णहयग्रीव–
दत्तात्रेयगारुडानामथर्ववेदगतानामेकत्रिंशत्संख्याकाना–
मुपनिषदां भद्रं कर्णेभिरिति शान्तिः। मुक्तिकोपनिषद् 54 ।।

1.प्रश्न, 2.मुण्डक, 3.माण्डूक्य, 4.अथर्व-शिर, 5.अथर्व-शिख, 6.बृहज्जाबाल, 7.नृसिंहतापनी, 8.आत्मबोध, 9.परिव्रात् (नारदपरिव्राजक), 10.सीता, 11.शरभ, 12.महानारायण, 13.रामरहस्य, 14.रामतापिण, 15.शाण्डिल्य, 16.परमहंस-परिव्राजक, 17.अन्नपूर्णा, 18.सूर्य, 19.आत्मा, 20.पाशुपत, 21.परब्रह्म, 22.त्रिपुरातपिन, 23.देवि, 24.भावन, 25.भस्म, 26.गणपित, 27.महावाक्य, 28.गोपाल-तपिण, 29.कृष्ण, 30.हयग्रीव, 31.दत्तात्रेय, 32. गारुड।

यहाँ प्रमुख उपनिषदों के वर्ण्य-विषय पर प्रकाश डाला जायेगा।

4.6.1 प्रश्नोपनिषद्

इस उपनिषद् का प्रारम्भ प्रश्नों से होता है। अतः इसका नाम **'प्रश्नोपनिषद्'** पड़ गया। ब्रह्मविद्या ज्ञान के लिये छः ऋषि पिप्पलाद मुनि से छः प्रश्न पूछते हैं। यह अथर्ववेद के पिप्पलाद शाखा से सम्बन्धित है, जिसके मुख्य ऋषि पिप्पलाद ही हैं। पिप्पलाद ऋषि जो केवल पीपल के फलों को खाकर जीवित रहे, इसलिए उनका नाम पिप्पलाद पड़ गया। इसमें ब्रह्मविद्या से सम्बन्धित प्रश्न पूछे गए हैं– (1) समस्त प्रजा कहाँ से और कैसे उत्पन्न हुई? (2) प्रजा को धारण करने वाले देवता कितने हैं? (3) प्राणों की उत्पत्ति कहाँ से होती है? (4) आत्मा की जाग्रत, स्वप्न और सुषुप्ति –इन तीन अवस्थाओं का क्या रहस्य है? (5) ओम् की उपासना का क्या स्वरूप है? (6) षोडश कला सम्पन्न पुरुष का क्या स्वरूप है? आदि इस उपनिषद् के प्रतिपादित विषय हैं।

4.6.2 मुण्डकोपनिषद्

मुण्डक शब्द का अर्थ है– मुण्डित (मुण्डन) हुए सिर वाला। सम्भवतः सिर मुडाने वाले लोगों के किसी सम्प्रदाय से इसका सम्बन्ध रहा हो। यह उपनिषद् अथर्ववेद से सम्बद्ध है। इसमें तीन मुण्डक एवं छः खण्ड हैं। इसमें ब्रह्मविद्या के उपदेश की प्रधानता है। इसमें बताया गया है कि ब्रह्मा ने अपने पुत्र अथर्वा को ब्रह्म विद्या का उपदेश दिया है। इसमें याज्ञिक अनुष्ठान और कर्मकाण्ड की हीनता दिखाई गई है, जबकि ब्रह्मज्ञान की श्रेष्ठता प्रमाणित की गई है। सांख्य और वेदान्त के सिद्धान्त भी इसमें प्रतिपादित किये गये हैं। द्वैतवाद के सिद्धान्तों का प्रसिद्ध मन्त्र भी इसमें दिया गया है–**'द्वा सुपर्णा सयुजा सखायः.... ।'** इसके अतिरिक्त अशोक स्तम्भ में अंकित वाक्य **'सत्मेव जयते नानृतं'** (3.1.6) यहीं से लिया गया है।

4.6.3 माण्डूक्योपनिषद्

यह आकार में छोटा उपनिषद् है, किन्तु महत्त्व इसका सबसे अधिक है। इसमें केवल 12 वाक्य या खण्ड हैं। इसमें ओंकार की विस्तृत व्याख्या की गई है। चैतन्य की चार अवस्थाओं (जाग्रत, स्वप्न, सुषुप्ति और व्यवहार) का वर्णन किया गया है। इसी प्रकार आत्मा को भी चार प्रकार का बताया गया है– वैश्वानर, तैजस्, प्राज्ञ, प्रपञ्चोपदेशम्। वेदान्त-दर्शन का प्रासाद इसी उपनिषद् पर खड़ा है।

4.7 सारांश

भारतीय धर्म, संस्कृति और दर्शन का मूल स्रोत वेद हैं। वेद के ब्राह्मण भाग के अन्तर्गत उपनिषद् ग्रन्थ आते हैं। ये वेद का एक महत्त्वपूर्ण और अन्तिम भाग हैं। उपनिषदों में ऋषियों के दार्शनिक चिन्तन की विशेष रूप से अभिव्यक्ति हुई है। उपनिषदों के उत्कृष्ट चिन्तन की पृष्ठभूमि वैदिक वाङ्मय के प्रथम ग्रन्थ ऋग्वेद संहिता से ही प्रारम्भ हो जाती है। वेदों का अन्तिम भाग या वेदों का सार होने से उपनिषदों को वेदान्त भी कहा जाता है। वेदान्त शब्द का सर्वप्रथम प्रयोग माण्डूक्योपनिषद् में ही हुआ है। बाद में वेदान्त एक दर्शन विशेष का नाम भी हो गया जिनका आधार उपनिषद् हैं। गुप्त ज्ञान के प्रतिपादक होने से उपनिषदों को 'गुह्य' और 'रहस्य' नाम से भी जाना जाता है। सद् धातु में क्विप् प्रत्यय से उप और नि उपसर्गों के साथ 'उपनिषद्' शब्द बनता है, जिसका अर्थ है– (गुरु के) समीप सविनय बैठना। इसी आधार पर उपनिषद् वह ज्ञान है जो गुरु के पास सविनय बैठकर प्राप्त किया जाता है। उपनिषदों की संख्या सुनिश्चित नहीं है। इनका 10 से लेकर 223 तक उल्लेख मिलता है। मुक्तिकोपनिषद् के आधार पर सामान्य रूप से भारतीय परम्परा में 108 उपनिषदों की चर्चा की जाती है। मुक्तिकोपनिषद् में ही दस प्रमुख उपनिषदों के नाम भी दिये गये हैं। प्राचीन काल से ही उपनिषदों पर अनेक भाष्य लिखे गये, जिनमें अद्वैतवादी शंकराचार्य का भाष्य प्रमुख हैं जो कि 10 प्रधान उपनिषदों पर लिखा गया है तथा इन्हीं के भाष्य मे तीन और उपनिषद् के नाम आने के कारण 13 प्रमुख उपनिषदें जानी जाती हैं। उपनिषद् ग्रन्थ भारतीय तत्त्वज्ञान और धार्मिक सिद्धान्तों के मूलस्रोत हैं। इनसे मानव की चेतना ऊर्ध्वगामी होती है। इनका उद्देश्य मोक्ष प्राप्ति है। ईशावास्योपनिषद् को सम्पूर्ण गीता का मूल माना जाता है। शोपेनहावर ने उपनिषदों को परम शान्ति के साधन बताया था। कर्म, उपनिषदों का मुख्य विषय ब्रह्मविद्या या आत्मविद्या है। उपनिषदों में ब्रह्म, आत्मा, दोनों की एकता, आत्मप्राप्ति के साधन, आवश्यकता आदि पर विस्तार से विचार किया गया है।

आत्मविद्या से सम्बद्ध कुछ दार्शनिक, नैतिक और बौद्धिक विचार भी उपनिषदों में प्राप्त होते हैं। विद्या, अविद्या, प्रेयस्, श्रेयस्, ओम्, योग, प्राण आदि पर इनमें विचार किया गया है।

4.8 कुछ उपयोगी पुस्तकें

1. वैदिक साहित्य और संस्कृति – पद्मभूषण आचार्य बलदेव उपाध्याय, शारदा संस्थान रवीन्द्रपुरी दुर्गाकुण्ड वाराणसी 1973 ई. प्रथम संस्करण।
2. वैदिक साहित्य और संस्कृति – आचार्य वाचस्पति गैरोला, संवर्तिका प्रकाशन प्रयागराज (इलाहाबाद) 1969 ई. प्रथम संस्करण।
3. वैदिक साहित्य एवं संस्कृति – आचार्य कपिलदेव द्विवेदी, विश्वविद्यालय प्रकाशन वाराणसी 2000 ई.।
4. वैदिक वाङ्मय का इतिहास भाग द्वितीय – आचार्य भगवद्दत्त ,अनुसंधान विभाग डी.ए.वी कॉलेज लाहौर 1927 ई. प्रथम संस्करण।
5. वैदिक साहित्य – पं. रामगोविन्द त्रिवेदी, भारतीय ज्ञानपीठ काशी 1950 ई. प्रथम संस्करण।
6. वैदिकवाङ्मयस्येतिहासः – आचार्य जगदीशचन्द्र मिश्र, चौखम्भा सुरभारती प्रकाशन 1988 ई. प्रथम संस्करण।
7. भारतीय दर्शन का इतिहास भाग 1, डॉ. सर्वपल्ली राधाकृष्णन्, राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी जयपुर प्रकाशन 1978 ई. प्रथम संस्करण।
8. वैदिक साहित्य का इतिहास – प्रो. पारसनाथ द्विवेदी, चौखम्भा सुरभारती प्रकाशन वाराणसी प्रकाशन 2009 ई. प्रथम संस्करण।
9. वैदिक साहित्य – प्रो.किरीट जोशी, सान्दीपनि विद्या प्रतिष्ठान, उज्जैन।

4.9 अभ्यास प्रश्न

1. उपनिषदों के रचना काल पर प्रकाश डालिए।
2. ईशोपनिषद् पर अपने विचार स्पष्ट कीजिए।
3. उपनिषदों के महत्त्व पर प्रकाश डालिए।
4. आचार्य शंकर द्वारा कृतभाष्य उपनिषदों का संक्षिप्त परिचय दीजिए।
5. निम्नलिखित पर टिप्पणी लिखिए –

   (क) ऐतरेय उपनिषद्, (ख) केन उपनिषद्, (ग) प्रश्नोपनिषद्, (घ) माण्डूक्योपनिषद्।